प्रयोजन की द्रष्टि से हिंदी भाषा के विविध रूप

डॉ.राजेशभाई अम्रतभाई पटेल
हिन्दी विभाग
सरकारी विनयन एवं वाणिज्य कॉलेज
फोर्ट-सोनगढ़ जि.तापी

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा, राजभाषा, तथा सम्पर्क भाषा है। इस देश की लगभग ८०% जनता इसी भाषा के माध्यम से एक दुसरे के सम्पर्क स्थापित करते है। यह भारत की प्रमुख तथा जनता के परस्पर विचार विनिमय की भाषा है। इसके बावजुद हिंदी विदेशों में भी बड़े पैमाने पर बोली एवं समझी जाती है। इससे स्पष्ट है कि हिंदी का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है , क्षेत्र विस्तार के कारण भाषा का एक रुप मिलना असंभव है। हिंदी का प्रयोग क्षेत्र दिन-व-दिन व्यापक होता जा रहा है। आज हम हिंदी का प्रयोग आवश्यकतानुसार अनेक रूपों में करते हैं।

हिंदी के विविध रूपों से तत्पर्य है- भिन्न-भिन्न स्थितियों संदर्भों में हिंदी के भिन्न-भिन्न रूप दिखाई देना। विभिन्न स्वजनों परिजनों के साथ औपचारिक संदर्भों में भी प्रयुक्त मौखिक , लिखित हिंदी का जो रूप होता है , सृजनात्मक लेखन के समय की हिंदी का जो रूप उससे बहुत भिन्न रहता है। मौखिक तथा लिखित हिंदी के रूपों में भी भिन्नता दिखाई देती है। इसी प्रकार ग्रामीण तथा नगरीय परिवेश के हिंदी रूपों में भिन्नता होती है। रेडीयो तथा टेलीविजन के प्रसार के कारण नगरीय हिंदी की एक नई शैली विकसित हो रही है।

संसार में जितनी भी भाषाएँ बोली जाती हैं। उनका रूप एक जैसा नहीं होता इसका कारण यह भी है कि , किसी भी भाषा का कोई स्थाई या अंतिम रूप नहीं होता। भाषा परिवर्तशील होती है , वह हमेशा संशोधित होती रहती है , भाषा नित-नूतनता को ग्रहण कर अपने को समृद्ध बनाती है। भाषा-विचार विनिमय

का माध्यम है , जिसके द्वारा मनुष्य अपने को अभिव्यक्त करता है। भाषा का सम्बंध समाज से हुआ करता है। भाषा का सम्बंध व्यक्ति से और व्यक्ति का सम्बंध समाज से हुआ करता है। जैसे-जैसे भाषा बदलती रहती है वैसे उसका समाज भी बदलता है। जैसे-जैसे समाज बदलता है वैसे-वैसे उसकी भाषा बदलती रहती है। व्यक्ति और समाज की आवश्यकताएँ अनेक हैं अनेक आवश्यक्ताओं के कारण ही हमें भाषा के विभिन्न रूप देखने को मिलते हैं।

आधुनिक युग में हिंदी विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी अपनी उपादेयता सिद्ध कर चुकी है। इस प्रकार प्रयोजन की द्रष्टि से हिंदी के तीन रूप हैं -

(१) सामान्य हिंदी

(२) साहित्यिक हिंदी

(३) प्रयोजनमूलक हिंदी

(१) सामान्य हिंदी :-

सामान्य जनता के लोकजीवन में आपसी व्यवहार में , प्रयुक्त होने वाली मौखिक हिंदी सामान्य हिंदी है। उसके शब्द वास्तविक जीवनसे जूड़े होते है। सामान्य आदमी की दिनचर्या रोजी-रोटी , हँसी-खुशी, सुख-दु:ख आदि के द्योतक शब्द इतने महत्वपूर्ण होते हैं कि उनको छोड़कर मनुष्य की परस्पर पहचान ही नहीं होती बल्कि लोकजीवन में प्रयुक्त होने वाले कुछ शब्द इतने जरूरी होते हैं कि वे जीवन के अंग बन जाते हैं। समाज से सम्बंध बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि बड़ा-से-बड़ा चिंतक , साहित्यकार या वैज्ञानिक भी अपने घर-परिवार, आस-पास, खेत-खलिहान या हाट-बाज़ार में सामान्य भाषा छोड़कर जीवित रहना, या सामाजिक बने रहना बड़ा कठिन है। सामान्य भाषा जिन लोगों के बीच बोली जाती है, वे लोग विभिन्न वर्गो एवं समुदायों में विभक्त हैं- आदिम समाज , शहरी श्रमिक-वर्ग, ग्रामीण मज़दूर-किसान, व्यापारी क्लर्क, अध्यापक, साहित्यकार, वकील, न्यायधीश, वैज्ञानिक आदि-आदि। इन सबको व्यावहारीक धरातल पर अपने समाज-विशेष के कारण धीरे-धीरे सामान्य हो जाते हैं और इस प्रकार उन सबके बीच प्रचलित सिक्के की तरह सामान्य रूप से व्यवह्रत होने लगते हैं। विस्तृत

परिवेश के असंख्य शब्द विभिन्न समुदायों में एक समान सामान्य भाषा के रूप में परिचित होते हैं।

इस प्रकार सामान्य हिंदी का सीधा सम्बंध मुख्यत: बोलचाल तथा जीवन के सामान्य व्यवहार से है। इन क्षेत्रों में सामान्यत: आपसी बातचीत , दैनिक व्यवहार यातायात , सब्जी-मण्डी बाज़ार , पर्यटन , सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवहार, व्यापार तथा साहित्य के अनेकविध अंग आदि का समावेश किया जा सकता है। अत: व्यावहारिक या सामान्य हिंदी से स्पष्ट तात्पर्य है कि रोजमर्रा के दैनिक जीवन और जगत् की कार्य-सिद्धि हेतु माध्यम के रूप में प्रयुक्त ऐसी सामान्य हिंदी जिसमें विशिष्ट भाषिक संगठन और प्रयुक्ति-स्तर की अपेक्षा उसके व्यावहारिक प्रयोग पर ही अधिक बल रहता है।

(२)साहित्यिक हिंदी :-

साहित्यिक हिंदी को ही शिष्ट भाषा कहते हैं। विद्वान लोग 'भाषा' शब्द का प्रयोग 'साहित्यिक-हिंदी' के लिए तथा साहित्य-शून्य असाहित्यिक हिंदी के लिए 'बोली' का प्रयोग करते हैं , जैसे संस्कृत भाषा , अंग्रेजी भाषा , जर्मन भाषा , फ्रेंच भाषा आदि। ब्रज-मंडल के घरों में बोली जाने वाली भाषा को 'बोली' कहेंगे। साहित्यिक हिंदी और सर्व-साधारण के बीच बोली जाने वाली बोली में भेद होते है। साहित्यिक भाषा में एक कृत्रिमता आ जाती है , जो उसे सर्वसाधारण की बोली से पृथक् करती है। सर्व-साधारण के बीच बोली जाने वाली भाषा सदैव विकासशील रहती है। वैदिक संस्कृत का रूप धारण किया , तो जन-भाषा का प्राकृतों में विकास होने लगा। सहित्यिक हिंदी को जीवित रखने के लिए और उसे समृद्ध बनने के लिए सर्व-साधारण की भाषा जहाँ बदलती रहती है , वहाँ साहित्यिक भाषा चिरकाल तक अपने स्थिर रूप में रहती है।

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने साहित्यिक भाषा की समृद्धि के मुल में जन साधारण की सृजन-सामर्थ्य को महत्व देते हुए लिखा है कि भावों को वे वाक्य ज्यादा व्यक्त कर सकते हैं , जो अपने शब्दार्थो को दूर तक ध्वनित करते हों और यह सामर्थ्य भाषा में तभी आती है , जब उसमें निर्जीव शब्दावलियों की जगह सजीव मुहावरे वाले वाक्य लाये जायें और इन मुहावरों की ओर ध्यान दें तो

मालूम होगा कि सौ से भी ज्यादा के जनक सफेद नागरिक नहीं है। उसी ने 'जिसकी लाठी उसकी भैंस ', 'दूर के ढोल सुहावने ', 'रस्सी जल गयी ऐंठन नहीं गयी' जैसे हज़ारों मुहावरों को प्रदान कर भाषा को समृद्ध किया । डॉ.इंद्र बहादुर सिंह ने काव्य- भाषा प्रकाश डालते हुए लिखा है कि कविता की भाषा कोशों की भाषा नहीं होनी चाहिए। भाषा केवल शुद्ध , स्वाभाविक या टकसाली नहीं होनी चाहिए, इसे प्रभावात्मक भी होना चाहिए, जिसमें हमारी चेतना डूब सके, जो हमारी चेतना को तल्लीन बना सके, जो कविता में संगीत और कर्ण-प्रिय झंकारे पैदा कर सकें। शैली न तो ठुकराने से काम चलता , न उसके ऊपरी और बाहरी सजावटों से काग़जी फूल तराश ने से काम चलता है। साधारण शब्दों में जीवित और दु:खती हुई रगों को छू देने से जो भाषा बनती है , वही कविता की भाषा है। पूरा समाज सुषुप्त और अर्धचैतन्य ढंग से जिन बातों को धुँधलके में अनुभव करता है , साहित्यकार उन्हीं अनुभवों को धुँधलके से उभारता है खुली रोशनी में प्रस्तुत करता है।

इस प्रकारा कहा जा सकता है कि साहित्य भाषा रस , छंद, अलंकार, शब्द-शक्तियाँ भर ही नहीं है, अपितु उसकी लय जीवन की लय से मेल खाती है। उसके लिए अभिव्यक्ति की सार्थकता का मतलब जीवन के साथ पूरी तौर से जुड़ने और उसे जीने की प्रक्रिया में निहित है।

(३)प्रयोजनमूलक हिंदी :-

प्रयोजनमूलक शब्द 'फंक्शनल'का हिंदी पर्याय है। प्रयोजनमूलक हिंदी का अर्थ है ऐसी विशेष हिंदी जिसका प्रयोग किसी विशेष प्रयोजन के लिये किया जाए। आज बोलचाल की हिंदी , व्यापार की हिंदी , कार्यालयी हिंदी, शासकीय हिंदी, सहित्यिक हिंदी, प्रशासनिक हिंदी जनसंचार की हिंदी आदि विविध रूप हिंदी के प्रयोजनमूलक को सिद्ध करते हैं। प्रयोजनमूलक हिंदी जीवन की आवश्यक्ताओं , आजीविका की पूर्ति का माध्यम है। भारतीयों के लिए प्रयोजनमूलक हिंदी जीविकोपार्जन का एक साधन है। इसे कामकाजी हिंदी अथवा व्यावसयिक हिंदी भी कहा जा सकता है।

'प्रयोजनमूलक हिंदी ' भाषा-विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा अनुप्रयुक्त भाषा-विज्ञान के अंतर्गत एक अत्याधुनिक उप-शाखा के रूप में विकसित हुई है। 'प्रयोजनमूलक' एक पारीभाषिक शब्द है जो भाषा की अनुप्रयुक्तता और प्रायोगिकता के निश्चित् अर्थ में प्रयुक्त होता है। 'प्रयोजनमूलक' शब्द 'प्रयोजन' विशेषण में 'मूलक' उपसर्ग लगाने से बना है। 'प्रयोजन' का अर्थ है - 'उद्देश्य' अथवा 'प्रयुक्त'। 'प्रयोजन' का सम्बंध भाषा में उसकी प्रयोजनीया से जुड़ा हुआ है। 'मूलक' उपसर्ग का अर्थ है - 'आधारित'। इस प्रकर प्रयोजनमूलक भाषा का अर्थ हुआ - ऐसी विशिष्ट हिंदी जिसका प्रयोग किसी विशिष्ट प्रयोजन या उद्देश्य के लिए किया जाता है। इसकी संकल्पना में प्रयुक्ति के स्तर , विषय-वस्तु, संदर्भ आदि के अनूरूप पारिभाषिक शब्दावली तथा विशिष्ट भाषिक संरचना समाद्रत है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रयोजनमूलक हिंदी से तात्पर्य है , हिंदी का वह प्रयुक्तिपरक विशिष्ट रूप जो विषयगत् , भूमिकागत् तथा संदर्भगत् प्रयोजन के लिए विशिष्ट भाषिक संरचना द्वारा प्रयुक्त किया जता है और जो सरकारी प्रशासन तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के अनेकविध क्षेत्रों को अभिव्यक्त प्रदान करने में सक्षम सिद्ध होता है।

प्राश्चात्य देशों के ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रभाव भारत पर भी पड़ा अत: राजभाषा हिंदी को नये महत्वपूर्ण भाषिक दायित्वों और अभिव्यक्ति के सर्वथा नवीनतम् क्षेत्रों से गुज़रना पड़ा। आर्थिक , राजनीतिक, सामाजिक तथा वैज्ञानिक संदर्भों के बदलाव के साथ बदलती हुई स्थितियों की ज़रूरत के प्रयोजन-विशेष के संदर्भ में हिंदी के एक ऐसे रूप की तीव्र आवश्यक्ता पड़ी जो प्रशासन , ज्ञान-विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों की ज़रूरतों को सक्षमता के साथ अभिव्यक्त एवं रूपायित कर सके।

डॉ.विनोद गोदरे के अनुसार - "प्रयोजनमूलक भाषा, भाषा का वह रूप है जिसका प्रयोग किसी प्रयोजन विशेष अथवा कार्य विशेष के संदर्भ में होता है - प्रयोग के आधर पर भाषा के दो रूप माने जा सकते हैं - पहला जिसका प्रयोग सामान्य जनजीवन में दैनिक कार्यों के संदर्भों में होता है और जिसका अभ्यास या ज्ञान कोई व्यक्ति सामान्य जीवन के संदर्भों से भिन्न किन्हीं विशेष कार्यों के

संदर्भों में होता है और जिसे अभ्यास या ज्ञान विशेष द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसी दूसरे रूप को प्रयोजनमूलक भाषा कहेंगे।"

इस परिभाषा के आधार पर समाकलित रूप से कहा जा सकता है कि "जीवन-जगत् की विभिन्न आवश्यक्ताओं अथवा लोक-व्यवहार , उच्च शिक्षा तंत्र तथा जीविकोपार्जन आदि के लिए विशेष अभ्यास और ज्ञान के द्वारा विशेष शब्दावली में विशेष अभिव्यक्त इकाईयों एवं सम्प्रेषण कौशल से समाज-सापेक्ष व्यावहारिक प्रयोजनों की सम्पूर्ति के लिए प्रयुक्त की जानेवाली विशेष भाषा प्रयुक्तियों को प्रयोजनमूलक हिंदी कहा जा सकता है।"

भाषा के सामान्य रूप से दो पक्ष होते है: (१) संरचनात्मक पक्ष , और (२) प्रयोग पक्ष। संरचनात्मक पक्ष से आशय है - भाषा की अपनी आंतरिक संरचना जो ध्वनि , शब्द , रूप , वाक्य , अर्थ के स्तर पर होती है। इसका अध्ययन संरचनात्मक भाषाविज्ञान में किया जाता है। भाषा के प्रयोग पक्ष से आशय है - समाज द्वारा भाषाका प्रयोग। समाज द्वारा भाषा का प्रयोग विभिन्न संदर्भों और क्षेत्रों में सर्वथा समान नहीं होता। समाज द्वारा भाषा का प्रयोग विभिन्न सांस्कृतिक, प्रशासनिक, तकनीकी, पारिस्थितिक आदि संदर्भों में होता है जो ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ आदि की द्रष्टि से भाषा को अनेकानेक रूप प्रदान करते हैं। भाषा के इस पक्ष का अध्ययन समाज भाषाविज्ञान के क्षेत्र में आता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि समाज भाषाविज्ञान का द्रष्टिकोण प्रयोजनमूलक होता है अर्थात समाज के विभिन्न - प्रयोजनमूलक होता है अर्थात् समाज के विभिन्न-प्रयोजनों के लिए भाषा के प्रयोग तथा उनके सम्बद्ध परिवर्तों का अध्ययन एवं विश्लेषण तथा निश्चयन भी भाषाविज्ञान में किया जाता है।

भाषा का प्रयोग समाज में होता है लेकिन समाज के संदर्भ हमेशा एक नहीं होते। प्रयोजन के अनुसार , अभिव्यक्ति के अनुसार समाज के परिवर्तन निर्धारित होते हैं। इस द्रष्टि से कार्यालय का समाज एक हैं , बैंक का दूसरा, कोर्ट-कचहरी का समाज तीसरा है तो किसी सब्जी-बाजार , साहित्यिक - गोष्ठी या डॉक्टरी-चिकित्सा आदि का समाज चौथा। इन सभी में भाषा का रूप किसी न किसी रूप में एक-दूसरे से हटकर है। हिंदी के संदर्भ में हिंदी साहित्य और उसकी

विभिन्न साहित्यिक विधाएँ यथा - काव्य, कहानी, उपन्यास, निबंध, आलोचना, एकांकी, रिपोतर्ज आदि , संगीत , आभूषण के बाजरों , सब्जी-बाजारों , कपड़ा - बाज़ारों, विभिन्न प्रकार के सट्टा बाज़ारों , समाचार पत्रों, फिल्मों, रेडियों, दूरदर्शन, चिकित्सा, व्यवसाय, विभिन्न खेलों आदि में प्रयुक्त हिंदी एक नहीं हैं। ध्वनि, रूप-रचना, मुहावरे आदि की द्रष्टि से उसमें कहीं ज्यादा स्पष्ट अंतर है। अत: ये सारे हिंदी के अलग-अलग प्रयोजनमूलक रूप हैं जिन्हें प्रयोजनमूलक हिंदी के दायरे में समेटा जा सकता है।

हिंदी के प्रयोजनमूलक परिप्रेक्ष्यों में एक प्रयुक्ति कार्यालयी भाषा है। सरकारी कामकाज में प्रयोग में लायी जाने वाली प्रयोजनमूलक भाषा को कार्यालयी हिंदी, प्रशासनिक हिंदी आदि कई नामों से जाना जाता है। कार्यालयी हिंदी या प्रशासनिक भाषा सरकारी कामकाज की ऐसी भाषा या हिंदी का वह स्वरूप है जिसके माध्यम से सरकारी कामकाज निपटाया जाता है। सरकारी कार्यालयों में पहले अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद की भाषा के रूप में तथा अब एक स्वतंत्र प्रयोजनमूलक कार्यालयी भाषा के रूप में होता है।

खेलकुद की भाषा भी हिंदी की एक प्रयुक्ति है। विशिष्ट प्रयोजनमूलक क्षेत्र होने के कारण पारिभाषिक-अर्द्धपारिभाषिक शब्दावली , प्रयोग एवं भाषा-शैली की द्रष्टि से खेलकुद कि हिंदी अपनी स्वतंत्र पहचान बना चुकी है तथा खेलकुद की भाषा के रूप में प्रचलित हो गयी है। खेलकुद के मनोरंजन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े होने के कारण खेलकूद की भाषा की वाक्य रचना मुहवरेदार बन गयी है। कमेंटेटर का मुख्य काम भाषा के बहाव में खेल की रोचकता का मिश्रण करके प्रभावी रूप से श्रोताओं के कान में उतारना होता है ताकि खेलके दर्शन तथा श्रोता दोनों खेल का भरपूर आनंद में कमेंटरि कही भी बाधक न होकर साधक ही सिद्ध होती है।

आज हिंदी भाषा के पचासियों स्वतंत्र प्रयोजनमूलक रूप विकसित हो चुके हैं जिनकी स्वतंत्र परिभाषिक शब्दावली है तथा स्वतंत्र प्रयोगका क्षेत्र है। विधि की हिंदी, विज्ञान की हिंदी, पत्रकारिता की हिंदी, बाज़र भाव की हिंदी, विज्ञापन की हिंदी, आकाशवणी की हिंदी , फिल्म की हिंदी , दूरदर्शन की हिंदी , तकनीकी हिंदी

आदि पचासियों स्वतंत्र प्रयोजनमूलक क्षेत्रों में हिंदी के माध्यम से रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय संविधान में हिंदी को भारत संघ की राजभाषा का दर्जा प्राप्त होने पर लाख विरोध के बावज़ूद भी इसके प्रयोग में बढ़ोतरी होते रहने पर इसके पचासियों स्वतंत्र प्रयोजनमूलक रूप पनप गये हैं। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि हिंदी ने अपने इन प्रयोजनमूलक रूपों को पनपाने में अंग्रेजी की देखादेखी की है तथा आरंभ में आनुवद के सहारे तथा आगे बढ़ते- बढ़ते स्वतंत्र रूप से अपना पथ प्रशस्त किया है। आज हिंदी भाषा इन सभी प्रयोजनमूलक क्षेत्रों में पूर्णतः प्रयोग के लिए भलीभाँति सक्षम भी है। बींसवी सदी हिंदी भाषा के प्रयोजनमूलक रूपों के उद्भव एवं विकास की सदी रही है तथा इक्कीसवीं सदी हिंदी भाषा के प्रयोजनमूलक रूपों के प्रयोग की सदी रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ

(१) प्रयोजनमूलक हिंदी - डॉ. कमल कुमार बोस

(२) प्रयोजनमूलक हिंदी - डॉ.लक्ष्मीकांत पाण्डेय, डॉ.प्रमिला अवास्थी

(३) प्रयोजनमूलक हिंदी अधुनातन आयाम - डॉ.अम्बादास देशमुख

(४) भाषा के विविध रूप और संचर-माध्यम- डॉ.मिथिलेश शर्मा,प्रा.रजन गोरे, प्रा.प्रकश कृष्णादेव धुमाल

(५) प्रयोजनमूलक हिंदी - डॉ. राम गोपाल सिंह